समाजवाद कितना समाधान कितना धोखा?

समाज मे संचालक और संचालित के बीच संबंध प्राचीन काल से चलता आया है। अंग्रेजो के आने के पूर्व संचालकों मे आर्थिक श्रेष्ठता की इच्छा कम थी। वे सम्मान की श्रेष्ठता के ज्यादा प्रयत्न करते थे। संचालक वर्गो मे धार्मिक श्रेष्ठ वर्ग भी था तथा राजनैतिक श्रेष्ठ भी। यहॉ तक कि व्यवसायी वर्ग भी आर्थिक श्रेष्ठता मे एक सीमा तक ही प्रयत्न शील रहता था। अग्रेजो के आने के बाद पूरा सामाजिक ढांचा बदलने लगा। अन्य सभी श्रेष्ठताओं का आकलन आर्थिक सम्पन्नता के आधार पर ही शुरू हुआ फिर भी भारत का सामाजिक ढांचा आसानी से नही विखर सका। किन्तु अग्रेजो के जाने के बाद भारतीय राजनैतिक व्यवस्था के अन्तर्गत जो ढांचा बनना शुरू हुआ वह बहुत तेज गति से आर्थिक युग की दिशा मे बढता चल गया। स्वतंत्रता के बाद भारत मे समाजवाद का दौर चला जो अघोषित साम्यवाद ही था। इस व्यवस्था मे समाज और राज्य धीरे धीरे एक हो जाया करते है। इस एकीकरण के अन्तर्गत राज्य मजबूत होता जाता है और समाज कमजोर । राज्य धीरे धीरे समाज के सब प्रकार के कार्यो को समेटना शुरू कर देता है। स्वतंत्रता के पूर्व भारत के पूंजीपति व्यवसायी भी अपनी इच्छा पूर्ति के बाद का धन सामाजिक कार्यो मे खर्च करना अपना कर्तब्य समझते थें किन्तु स्वतंत्रता के बाद राज्य ने ये सब सामाजिक कार्य अपने जिम्मे लेकर पूंजीपति व्यवसायियों से भारी से भारी टैक्स लेना शुरू कर दिया। परिणाम स्वरूप व्यापारियों तथा सरकार के बीच अर्थ संग्रह की छोना झपटी शुरू हो गई । सरकार ने समाजवाद की अंधी दौड मे व्यापारियो से अपनी आय का पंचान्नवे प्रतिशत तक टैक्स वसूलने के कानून बना दिये तो व्यापारियो ने भी इस कर लूट के समानान्तर अपनी एक अलग अर्थ व्यवस्था खडी कर ली। व्यापारी समाज व्यवस्था से पूरी तरह निकलकर व्यापारी तक सीमित हो गया। भारत मे समाजवाद के नाम पर पूंजीवाद बढने लगा।

धीरे धीरे समाज के प्रत्येक क्षेत्र मे पूंजीवाद घुसने लगा। ब्यापारियों के बाद राजनीति समाज सेवा से निकलकर ब्यापार बनी। और अब ता स्थिति यह हो गई है कि संचालक वर्ग का प्रत्येक घटक चाहे वह धर्म गुरू हो या समाज सेवक, पूरी तरह ब्यवसायी बन चुका है। वर्तमान समय मे पांच वर्ग ऐसे है जो समाज के मार्ग दर्शक के रूप मे माने जाते है (1) राजनेता (2) पूंजीपति (3) धर्मगुरू (4) समाज सेवक । पांचवे वर्ग की चर्चा अलग से होगी।

राजनेताओ ने सबसे पहले राजनीति को अपना व्यवसाय बनाया । सम्मान के लिये सत्ता का विचार बिल्कुल छोडकर सत्ता और धन एक दूसरे के पूरक बनते चले गये। सत्ता से धन और धन से सत्ता का ऐसा घालमेल हुआ कि व्यापारी पूंजीपति भी राजनैतिक पूजीपतियों के सामने कई गुना पीछे चले गये । एक भी राजनेता ऐसा नही बचा जिसने राजनीति को व्यापार न बनाया हो। जो दो चार जिने चुने अपवाद स्वरूप दिखते भी है वे भले ही ऐसा धन अपने घर न ले जाते हो किन्तु पार्टी फंड के लिये तो वे कुछ न कुछ यह सब करते ही है। राजनीति का तो वर्तमान मे ऐसा व्यवसायी करण हुआ ह कि बडे बडे व्यवसायी भी अब व्यवसाय की जगह राजनीति करने की दिशा मे ही ज्यादा आकृष्ट हो रहे है। राज्य सभा की सीटो के लिये एक एक उद्योग पति जिस बड़ी रकम की बोली लगाकर राजनैतिक निष्ठाएँ खरीदने में लगा है वह प्रमाण है कि राजनीति में जाने का प्रयत्न एक शुद्ध व्यवसाय से ज्यादा और कुछ नहीं है। पहले तो ऐसी व्यवसाय कुशलता के लिये सवर्ण ही माने जाते रहे किन्तु मायावती जी तथा मधुकोड़ा ने अवर्ण होते हुए जितने कम समय में जिन आर्थिक उंचाइयों को छूकर दिखाया है वह यह सिद्ध करने का पर्याप्त आधार है कि उचाइयां छूने का एकाधिकार सिर्फ सवर्णों के पास ही सुरक्षित नहीं है। अवर्ण भी यदि अवसर पा जायें तो ये भी सबको पछाड़कर आगे निकल सकते हैं।

ब्यापारियों ने भी किसी तरह किसी सीमा तक धन संग्रह को अपना लक्ष्य बना लिया। कुछ तो सरकारी कानूनों से बचना उनकी मजबूरो भी थी और कुछ राजनेताओं को देख देख कर इन्होंने अपना लक्ष्य बदला। अब शायद ही कोई व्यापारी बचा हो जो सिर्फ सम्मान के लिये समाज सेवा पर धन खर्च करता हो अन्यथा अधिकांश तो समाज सेवा के नाम पर इसलिये ही धन खर्च करते हैं जिससे वे प्रशासन अथवा राजनताओं के बीच अपना सम्मान बढ़ाकर उससे कुछ आर्थिक लाभ उठा सकें। ऐसे लोग भी इक्के दुक्के ही होंगे जो राजनेताओं या प्रशासन के माध्यम से सिर्फ सामाजिक सम्मान तक सीमित हो। चाहे सामाजिक सम्मान मिले या न मिले किन्तु आर्थिक लाभ तो मिलना ही चाहिये यह उसकी समाज सेवा का लक्ष्य होता है।

संचालकों की लाइन में राजनेताओं और व्यापारियों के साथ साथ धर्मगुरू भी बिल्कुल पीछे नहीं है। धर्म शब्द इनका ब्यवसाय बन चुका है। नये नये धर्मगुरू नयी नयी तकनीक लेकर समाज में आ रहे हैं। प्राचीन समय में मठ मंदिर की सम्पत्ति व्यक्तिगत नहीं होती थी किन्तु धीरे धीरे इस प्रणाली में बदलाव आया। सरकार ने इस पर अंकुश के लिये ट्रस्ट प्रणाली बनाई। मैं यह नहीं कह सकता कि ट्रस्ट प्रणाली ने ऐसी धर्म के नाम पर ब्यवसाय खड़ा करन की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाया या विस्तार किया किन्तु यह सच है कि धर्म के नाम पर ब्यवसाय धड़ल्ले से फल फूल रहा है। गायत्री परिवार की ब्यावसायिक इच्छाएँ तो आंशिक ही थीं किन्तु आशाराम बापू आदि ने धर्म को पूरी तरह व्यावसायिक स्वरूप दे दिया रामदेव जी आदि ने इस ब्यवसाय को और आगे बढ़ाया और निर्मल बाबा सरीखों ने धर्म और व्यवसाय के बीच से हल्का पर्दा भी हटाकर दोनों को एक कर दिया। अब निर्मल बाबा की सफलता के बाद कौन इनसे आगे बढ़ता है यह भविष्य बतायेगा किन्तु अब धर्म भी पूरी तरह ब्यवसाय बन चुका है यह बिल्कुल स्पष्ट है।

राजनीति, धर्म और ब्यवसाय के व्यापारीकरण के बाद शुद्ध समाज सेवा के लिये तो सिर्फ सामाजिक संस्थाएँ ही बची थीं। अब भी ऐसी सामाजिक संस्थाएँ समाज में बची हैं जो समाज सेवा का व्यापार नहीं करतीं। किन्तु ऐसी संस्थाओं की संख्या निरंतर घटती जा रही है और समाज सेवा को व्यापार समझकर काम करने वालों को संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। एन जी ओ के नाम पर लगा बोर्ड तो समाज सेवा के व्यवसायीकरण की अप्रत्यक्ष घोषणा ही है किन्तु अनेक प्रकार के सामाजिक कार्यों के नाम पर धन इकट्ठा करके घपला करने वालों की संख्या भी अब आधे से उपर ही चली गई लगती है तथा इनकी संख्या लगातार बढ़ती ही जा रही है। मैंने अपने अठावन वर्ष के सार्वजनिक जीवन में न कभी चंदा लिया और न दिया। यहॉ तक कि बचपन में हुए भारत चीन या भारत पाक युद्ध के समय भी मैंने कोई चन्दा नहीं दिया और अब तक कभी किसी कार्य के लिये चन्दा मांगा भी नहीं। इसके विपरीत मैंने अपने शहर में सम्पन्न अनेक सार्वजनिक कार्यों में भ्रष्टाचार की बड़ी मात्रा में पोल खोली और स्पष्ट किया कि चन्दा आमतौर पर धन्धा बन गया है। आज से चालीस पचास वर्ष पूर्व यह सिद्ध करना एक कठिन कार्य था और आज यह सिद्ध करने का प्रयास ही अनावश्यक है क्योंकि अब तो सामाजिक कार्य भी एक व्यवसाय है यह करीब करीब प्रमाणित ही हो चुका है।

प्राचीन काल में स्कूल, अस्पताल, व्यायाम घर, खेलकूद आदि शुद्ध सामाजिक कार्य थे। अब इनकी चर्चा करना ही व्यर्थ है क्योंकि अब ये सभी काम लगभग व्यावसायिक घोषित हो चुके हैं। आजकल क्रिकेट की बहुत चर्चा होती है। क्रिकेट का खेल भी व्यवसाय है और खिलाड़ी भी। खिलाड़ी इस सीमा तक व्यावसायिक हो चुके हैं कि उन्होंने अपनी लाज शर्म का हल्का पर्दा भी हटा ही दिया है। किसी खिलाड़ी के खेल में व्यवसाय के साथ साथ समाज या देश प्रेम का भी कोई तालमेल होगा ऐसा खोजना बहुत कठिन काम हो गया है। किस तरह ये लोग सौदेबाजी करते हैं और कभी कभी तो बिल्कुल नीचे उतर कर मैच फिक्स भी कर लेते हैं यह मन में घृणा भर देता है। इतनी सौदेबाजी के बाद इन्हें भारत रत्न भी चाहिये। ऐसा लगता है कि भारत रत्न भी एक व्यवसाय बन गया है जिसके लिये वर्तमान में लालू मुलायम सरीखे नेता, अम्बानी समूह सरीखे उद्योगपति, रामदेव निर्मल बाबा सरीखे धर्मगुरू या विदेशों से अरबों रूपये लाकर समाज सेवा का व्यवसाय करने वाले एन जी ओ में से ही किसी को छांटना पड़ेगा अन्यथा सबसे उपर का दावा सचिन तेंदुलकर सरीखे देश भक्त खिलाड़ी का तो है ही। अब तो लगता है कि ऐसे राष्ट्रीय पुरस्कार भी एक व्यवसाय का रूप बनते जा रहे हैं। किसी दिन यह भेद भी खुल सकता है कि अमुक पुरस्कार की घोषणा सिने तारिका रेखा के विवाह के समान ही फिक्स थी।

मैं यह मानता हूँ और आप भी समझ गये होंगे कि राजनीति धर्म, समाज सेवा, स्कूल, अस्पताल, खेलकूद आदि का व्यवसायीकरण हो गया ह या होता जा रहा है। इसमें दोषी कौन है यह छांटना आसान नहीं। सब एक दूसरे को दोषी बताएंगे किन्तु इसमें शामिल सब हैं। स्पष्ट है कि प्रारंभ में इस पतन का मुख्य कारण समाजवाद के प्रति आकर्षण था जिसने भारत की समाज ब्यवस्था को तोड़कर राज्य व्यवस्था को मजबूत बनाया और इस राज्य सशक्तिकरण की अवैध संतान भारत में पूंजीवाद का विस्तार है। राज्य की गुलामी की जगह ब्यावसायिक समाजवाद को समाज ने कम बुरा माना क्योंकि राज्य केन्द्रित समाजवाद सर्वांगीण गुलामी है और व्यावसायिक समाजवाद प्रत्यक्ष बुराई है। गुलामी की अपेक्षा बुराई कम बुरी होती है। यद्यपि अब भी आपको ऐसे लोग बड़ी संख्या में मिल जायेंगे जो ब्यावसायिक समाजवाद को गाली देकर राज्य केन्द्रित समाजवाद का सपना देख रहे हैं। अभी अभी ही मैंने वृंदा करात का इंटरव्यू सुना जिसमें वे भारत में बढ़ रहें व्यवसायीकरण के विरूद्ध राज्य स्तरीय समाजवाद के पक्ष में अनेक तर्क प्रस्तुत करते हुए भी कुछ कुछ निराश दिख रही थी। मनमोहनसिंह जी की अर्थनीति ने भी व्यवसायीकरण को मजबूती प्रदान करते हुए राज्य स्तरीय समाजवाद की जड़ों में मट्ठा डालने का काम किया। मनमोहनसिंह प्र. मंत्री चाहे रहें या न रहें किन्तु भारत अब वैसा समाजवादी कभी नहीं बन सकता जैसा वृंदा जी सोच रही है। प्रकाश करात के प्रधानमंत्री बनने के बाद भी नहीं क्योंकि भारत अब वैश्वीकरण के मार्ग पर स्थायी रूप से चल पड़ा है।

फिर भी विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या राज्य स्तरीय समाजवाद से छुटकारा पाकर व्यावसायिक समाजवाद हमारे लिये कोई अच्छी स्थिति हो सकतो है? हमने बंगाल में साम्यवादी गुलामी से मुक्ति क लिये ममता बनर्जी को स्वीकार कर लिया किन्तु ममता कोई आदर्श व्यवस्था तो नहीं है। प्रकाश करात का खतरा दूर होते ही हमें ममता का भी विकल्प तो खोजना ही होगा। जिस तरह वर्तमान व्यावसायिक समाजवाद के परिणाम स्वरूप भ्रष्टाचार, आर्थिक असमानता, श्रमशोषण आदि अनियंत्रित होते जा रहे हैं वह कोई अच्छा विकल्प तो नहीं है। हमें कुछ नया विकल्प खोजना ही होगा। हमने राज्यस्तरीय समाजवाद रूपी बड़ी बुराई से पिण्ड छुड़ाने के लिये सभी सामाजिक संस्थाओं के व्यवसायीकरण को मान लिया किन्तु अब ऐसा लग रहा है कि राज्य स्तरीय तानाशाही का स्थान पूंजीवादी व्यवस्था ने पूरी तरह ले

लिया है। अब वैसी तानाशाही का खतरा नहीं। इसलिये हम अब इस पूंजीवादी तानाशाही का भी विकल्प खोजें। ये सभी शक्तियां चाहे वे व्यवसायी घराने हों या राजनेता, चाहे ये धर्मगुरू हों या समाजसेवक अथवा खिलाड़ी ही क्या न हों, सबका एक गिरोह बन गया है जिनका आपस में एक समझौता है कि वे किसी न किसी तरह मिल जुलकर शेष समाज को गुलाम बनाकर रख सकें। ये सब लोग एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी भी हैं किन्तु अन्ततोगत्वा हैं सब एक। ये सब लोग एक दूसरे के पूरक बन जाते हैं भले ही कितना भी एक दूसरे का विरोध क्यों न करें। ऐसी स्थिति में एक नई प्रणाली विकसित करनी होगी। वर्तमान में संचालक और संचालित नाम से जो दो स्पष्ट समूह बने हुए हैं यह व्यवस्था ही कमजोर होनी चाहिये। संचालक और संचालित के बीच लगातार दूरी बढ़ाई जा रही है क्योंकि इस दूरी का बढ़ना ही उस गिरोह के लिये लाभ का धंधा है। राजनेता चाहता है कि समाज लगातार राज्य आश्रित बना रहे। वह कभी बालिग न हो। वह राज्य आश्रित सुविधाएं लेता रहें और राज्य की जय बोलता रहे। धर्म चाहता है कि समाज हमेशा इसी तरह भावना प्रधान बना रहे। वह ईश्वर के आश्रित बना रहे। वह धर्मगुरूओं के पैर छू छूकर पैसा देता रहे और आशीर्वाद लेता रहे। सामाजिक संस्थाएँ चाहती है कि समाज कभी एक जुट न हो। वह विभिन्न जातीय धार्मिक राजनैतिक समूहों में बंटकर निरंतर आपस में लड़ता रहे और उन्हें सामाजिक संस्था मानकर उन्हें वकील के रूप में फीस चुकाता रहे। खिलाड़ी चाहता है कि उसका खेल देख देखकर समाज अपना सारा दुख दर्द भूल जाय और उसे सब धन सम्मान देता रहे। ये सब समाज को कमजोर करने को कहीं न कहीं एक जुट हैं तभी तो कोई धर्म को सर्वोच्च बता रहा है तो कोई राष्ट्र को। एक भी ऐसा नहीं है जो समाज सर्वोच्च का नारा दे। इन सब संचालकों ने लगातार संचालितो के साथ धोखा किया है।

हमारे पास इन सबसे टकराने का कोई मार्ग नहीं है क्योंकि ये बहुत मजबूत हैं किन्तु हमारे पास एक मार्ग है कि हम संचालक और संचालित क बीच की दूरी को कम से कम करें चाहे वह दूरी धर्म के नाम पर बढ़ती हो या राज्य के नाम पर। हम समाज को धर्म और राष्ट्र से उपर मानना शुरू करें चाह नेता स्वयं को समाज से उपर कहें या धर्मगुरू। हम जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, गरीब अमीर, उत्पादक उपभोक्ता जैसे समाज तोड़क नारों से स्वयं को दूर करें। यदि हम इतने प्रारंभिक उपायों पर भी अमल कर सके तो जिस तरह राज्य स्तरीय समाजवाद से बदलकर व्यावसायिक समाजवाद आया है उसी तरह इस पूंजीवाद से भी पिण्ड छ्टकर भारत में वास्तविक समाजवाद संभव है और यदि हम भारत म ऐसा कर सके तो सारा विश्व अनुकरण करने में पीछे नहीं रहेगा।

निर्मल बाबा भगवान या अपराधी

आजकल सम्पूर्ण भारत मे एक बहस छिडी हुई है कि निर्मल बाबा भगवान हैं या अपराधी। दोनो ही ओर से लगातार सिद्ध करने के प्रयास जारी हैं। मैने भी इस बहस मे कूदना ठीक समझा । विशेषकर इसलिये कि निर्मल जीत सिंह नरूला हमारे घर रामानुजगंज से सिर्फ साठ किलो मीटर दूर डालटेनगंज के निवासी है तथा मेरे निकट के मित्र साफ सुथरी राजनीति करने वाले डालटेनगंज निवासी इंन्दर सिंह नामधारी के सगे साले हैं।

निर्मल बाबा न भगवान है न कोई चमत्कारी । वे एक व्यवसायी मात्र हैं। कई तरह के व्यवसाय मे असफल होने के बाद उन्होने धर्म का व्यवसाय अपनाया और इसमें वे सफल हो गये। वैसे तो भगवान का होना न होना ही विवादास्पद है किन्तु यदि भगवान है भी तो वह एक अदृष्य शक्ति है । काई व्यक्ति भगवान नहीं हो सकता । यदि हम किसी व्यक्ति को भगवान मान भी लें तो प्रश्न उठता है कि दोष किसका? भगवान मानने वालों का या बनने वालों का? आप ठगे जाने के लिये बिल्कुल तैयार बैठे हैं। कोइ न कोइ आपको ठगेगा ही यह निश्चित है। निर्मल बाबा ने ऐसे ठगे जाने के लिये तैयार भक्तो को ठगकर उनकी इच्छा पूरी कर दी। यह कार्य अनैतिक तो है और आंशिक रूप से अपराध भी किन्तु यह ठगी कोई बहुत बडा गंभीर अपराधो की श्रेणी मे शामिल नही है। पूरे देश मे बाबा के विरूद्ध जो बवंडर उठा वैसी कोई बात नही थी।

भारत में अन्ध श्रद्धा द्वारा समाज को ठगने का काम कोई पहली बार नही हो रहा है । पण्डे पुजारियों द्वारा सैकडो वर्षो से हम इसी तरह की अन्ध श्रद्धा के नाम पर ठगे जाते रहे है। कभी गणेश जी दूध पीना शुरू कर देते हैं तो कभी गंगा जल के नाम पर राजनैतिक चंदा इकठ्ठा करने की योजना बन जाती है। कभी अयोध्या का मंदिर हमारे जीवन मरण का प्रश्न बन जाता है तो कभी जन्नत मे मिलने वाले लाभ के झांसे मे नवजवान प्रत्यक्ष मृत्यु तक का वरण करने को तैयार हो जाते है। अन्ध श्रद्धा का लाभ उठाने का यह गोरख धंधा कोई नया नही है। नयापन है तो सिर्फ यही कि पहले इस प्रकार के व्यवसाय के लिये दीर्धकालिक योजना बनती थी, एक समूह तैयार होता था, पुराने तौर तरीको की सहायता ली जाती थी तथा धीरे धीरे वर्षो के प्रयास के बाद कहीं दुकान चल पाती थी । निर्मल बाबा ने ऐसी तकनीक खोजी कि न किसी व्यक्ति की सहायता की जरूरत पडो न किसी तैयारी की और न ही पुराने तौर तरीकों की । एकाएक अकेले ही इस उंचाई तक जाकर उन्होने सभी धर्म के ठेकेदारो को भौचक कर दिया है। निर्मल बाबा की गति इतनी तीव्र थी कि दो तीन माह मे ही वे सबसे बडे पेशेवर गुरू बनने मे सफल हो गये।

निर्मल बाबा ने कोई अपराध नही किया है । हमने अब तक समाज में जो भावनात्मक उबाल पैदा करके रखा उसका वे लाभ उठा ले गये । निर्मल बाबा द्वारा इस प्रकार लाभ उठाना स्वयं मे कोई अपराध न होकर समाज मे लगातार पैदा की जारी अन्ध श्रद्धा का परिणाम है । जो लोग निर्मल बाबा विरोध का आधार बनाकर ऐसी अन्ध श्रद्धा के विरूद्ध समाज को जागरूक कर रहे है वे बधाई के पात्र है किन्तु ऐसे भी कुछ लोग उनके विरूद्ध खडे है जो उनकी तात्कालिक सफलता से परेशान है । उनके द्वारा बाबा का विरोध सिर्फ व्यावसायिक टकराव तक ही सीमित है, कोई विरोध नही। क्योकि एसे लोग अंध श्रद्धा के तो समर्थन मे हैं और निर्मल बाबा के विरोध मे। ऐसे लोग अपनी दुकानदारी पर चोट नही आने देना चाहते।

मै स्वयं अनुभव करता हूँ कि पूरे भारत मे निर्मल बाबा के ऐसे तात्कालिक अवतरण से पूरा देश प्रभावित हुआ किन्तु ज्ञान तत्व से जुडे पाठक उनसे बिल्कुल भी अछूते रहे। हमारे इतने बडे परिवार का कोई सदस्य इस ठगी में नहीं फंसा । हमारे देश भर के संर्पक वाले भी बच गये । आखिर क्या बात है कि हमारे हजारो परिचित बचने मे सफल रहे? उसका एक ही कारण है कि ज्ञान तत्व ने हमेशा ही अन्ध श्रद्धा से दूरी बनाकर रखी। हमने न कभी इसे व्यवसाय बनाया न ही बनाने वालों को प्रोत्साहित किया। यदि आप मीठी मीठी खीर पकाकर अपने खाने की योजना बनायेंगे और बीच मे कुत्ता आकर खा जाय तो दोष किसका ? विचार करिये । क्या आप अब भी धर्म के नाम पर पाखंड को जिन्दा रखना चाहते है तो हम ऐसे किसी पाखंड के विरूद्ध हैं, निर्मल बाबा के नहीं । आवश्यक नही कि निर्मल बाबा का व्यवसाय खतम ही हो जायगा। आवश्यक नही कि निर्मल बाबा जेल चले ही जायंगे। निर्मल बाबा के पास इतना धन है कि वे आसानी से इस संकट से निकल सकते है। यदि फिर भी दिक्कत हुई तो किसी भी राजनैतिक दल से वे समझौता करके बचाव का रास्ता निकाल सकते है। ऐसी स्थिति मे आवश्यक है कि हम संतुलित हो। हम भावावेश मे प्रतिक्रिया देने की अपेक्षा वह मार्ग खोजने का प्रयास करे जिसमे निर्मल बाबा सरीखे लोग हमारी अन्ध श्रद्धा का लाभ उठाने मे सफल न हो सके।

1.श्री संजय तिवारी, विस्फोट डाट काम, दरियागंज, दिल्ली

प्रश्न– आपने चर्चाओ मे कई बार छत्तीसगढ के मुख्यमंत्री रमणसिंह जी की प्रशंसा की है। मैने सुना है कि छत्तीसगढ के भाजपा शासन काल मे भ्रष्टाचार बहुत बढ गया है। मुख्यमंत्री रमणसिंह जी की चाउर वाले बाबा की भूमिका ही उनकी नैया पार लगाती है अन्यथा उनमे कोई विशेषता नहीं । आप छत्तीसगढ के ही है तथा आपने भाजपा का जन्मपूर्व से अबतक का कार्यकाल स्वयं देखा है। आप इस संबंध मे कुछ जानकारी देने की कृपा करें।

उत्तर– रमण सिंह भारत के दस पंद्रह आदर्श राजनेताओ मे एक माने जाते है।इनकी यह विशेषता है कि ये नये नये नीतिगत प्रयोग करते रहते है। ये पूरी तरह व्यवहार कुशल है तथा अनावश्यक विरोध की राजनीति नही करते।

इनके प्रशासनिक कार्यकाल मे भ्रष्टाचार अजीत जोगी के कार्य काल की अपेक्षा कुछ बढा ही है किन्तु भ्रष्टाचार के मामले मे आज पूरे देश का जो औसत है उसकी अपेक्षा छत्तीसगढ मे भ्रष्टाचार ज्यादा नही है। अजीत जोगी के कार्यकाल मे भ्रष्टाचार के साथ साथ कार्यकर्ताओं की दादागिरी भी जड़ी हुई थी । इनके शासन काल मे भ्रष्टाचार के साथ साथ दादागिरी गुण्डागर्दी की घटनाए कम ही सनने को मिलती है।

रमण सिंह जी ने विकास के माडल का गुजरात से अध्ययन करके कुछ कुछ नकल की है। छत्तीसगढ मे विकास की गति अन्य प्रदेशो की तुलना मे बहुत अच्छी है। दूसरी ओर छत्तीसगढ भारतीय जनता पार्टी ने पार्टी स्तर पर बंगाल का अध्ययन किया लगता है। मुझे पता चला कि सरगुजा जिले मे ही बंगाल की तर्ज पर पार्टी टैक्स वसूली का अभिनव प्रयोग शुरू हुआ है। पार्टी कार्यकर्ता या नेता अफसरों से पैसा लेते है या ब्यापारियों से समय समय पर दवाकर चंदा वसूलते है यह बात तो आम तौर पर सुनी जाती है किन्तु व्यापारियो से नियमित रूप से बंगाल की तर्ज पर टैक्स वसूला जाय यह घातक प्रवृत्ति कुछ नयी सी बात ही है। विश्वास न होने पर मैने जब जांच की और सही पाया तो बहुत पीडा हुई क्योकि मै इस पार्टी के प्रारंभिक संस्थापको मे सरगुजा जिले का प्रतिनिधित्व कर चुका हूँ । उस सरगुजा जिले मे, जिसकी प्रशंसा हम लोग पूरे देश मे करते रहते है, जिस जिले के ही छत्तीसगढ भाजपा के वर्तमान प्रदेश अध्यक्ष भी है, जहॉ के संगठन मंत्री ही आज प्रदेश के संगठन मंत्री भी है तथा जिस परिवार के सदस्य ने इमानदारी के लिये मंत्री रहते हुए सम्पूर्ण मध्य प्रदेश मे शराफत और इमानदारी का रिकाड बनाया हो उस परिवार की छत्र छाया मे इस नयी परंपरा की शुरूआत दिखती है। गुजरात की नकल यदि विकास की नई उंचाइया दिखा सकती है तो बंगाल की साम्यवादी नकल कहॉ तक गिरा देगी यह सोचना भी आवश्यक है। मुझे तो झटका लगा जब सुना कि दो अग्रवाल युवक इस घातक टैक्स परंपरा की अगुवाई कर रहे है।

जहॉ तक चाउर वाले बाबा का संबंध है तो मै आपको यह कहावत भी बता दूँ कि मुख्यमंत्री जी के विषय मे एक नई कहावत भी बन रही है कि रमणसिंह जी गन्ना किसानो का रस चूस चूस कर धान की पैदावार बढाया करते है। छत्तीसगढ मे धान का बाजार भाव नौ सौ पचास रूपया है और सरकारी खरीद मूल्य ग्यारह सौ रूपया । छत्तीसगढ से बाहर का धान चोरी छिपे आया और सरकारी व्यवस्था से कई गुना उपर चला गया। सरकार के पास चावल रखने की जगह न होने के कारण धान मिले बंद है। धान रखने की तो वैसे हो अव्यवस्था है । दूसरी ओर हमारे जिले मे गन्ने का बाजार भाव ढाई सौ रूपया है तो सरकारी रेट दो सौ रूपया। गन्ना बडी मात्रा मे चोरी छिपे बाहर के प्रदेशो मे चला गया । गन्ना मिल गन्ने के अभाव मे बन्द हो गई। हमारा क्षेत्र नक्सलवादी क्षेत्र हाने से हमारी सरकार लगातार केन्द्र सरकार से सुरक्षा बल मांगती रहती है तो दूसरी ओर अपनी प्रशासनिक ताकत धान की अवैध आवक रोकने और गन्ने की अवैध जावक रोकने मे लगाती रहती है। रमण सिंह जी का तुगलकी फरमान ही तो है कि गन्ना किसान बिना कलेक्टर की अनुमति के न गन्ना काट सकता है न किसी अन्य को बेच ही सकता है। और यहॉ तक कि गुड भी नही बना सकता। अति तो यहां तक है कि बाजार मे रस पीने वालो को भी चोरी छिपे ही गन्ने का रस मिल सकता है। रमण सिंह जी ने धान की बम्फर पैदावार से खुश होकर धान पैदा करने वालो को पचास रूपया प्रति क्विंटल इनाम की भी घोषणा कर दी । यदि जरा भी सूझ बूझ से काम होता तो गन्ने पर सौ रूपया प्रति क्विंटल का इनाम देकर धान का इनाम कम करके पचीस भी कर देते तो शायद गन्ने और धान के बीच इतनी अफरातफरी न मचती।

रमण सिंह जी के जीतने के पीछे चाउर वाले बाबा की छवि कम और जोगी खतरा ज्यादा महत्वपूर्ण है । छत्तीसगढ की जनता जोगी जी के कार्यकाल की याद से ही सिहर उठती है । इसलिये जब तक जोगी जी कांग्रेस की राजनीति मे सक्रिय है तब तक भाजपा के लिये कोई खतरा नहीं। फिर भी भाजपा को बंगाल की नकल करने मे उसके परिणामो को भी अवश्य ही याद रखना चाहिये।

2.श्री योगिन गुर्जर 47 जी साखर पेठ शोलापुर महाराष्ट्र

प्रश्न — ज्ञान तत्व दो सौ अड़तीस के बाद नहीं मिला है। पता करियेगा। अंक दो सौ सैंतीस तो इतना गंभीर है कि समाज शास्त्र के विद्यार्थियों को अवश्य पढ़ना चाहिये।

महाराष्ट्र में नगरपालिकाओं के चुनाव हुए। शोलापुर का भी हुआ। जिस तरह उम्मीदवारों ने खर्च किया वह पिछले सारे रेकार्ड तोड़ चुका है। जब उम्मीदवार इस तरह खर्च करेंगे तो वे इमानदार कैसे होंगे। बताइये कि दोषी कौन? पैसा देकर वोट लेने वाला या पैसा लेकर वाट देने वाला? इसका समाधान क्या है? आप जो अभियान चला रहे हैं उसमें मैं क्या सहायता कर सकता हूँ।

उत्तर — मैं कार्यालय से पता करूंगा कि गलती कहॉ है। ज्ञान तत्व दो सौ सैंतीस वास्तव में संग्रहण करने योग्य है। बहुत से पाठक तो सभी अंक सुरक्षित रखते हैं।

' शोलापुर नगरपालिका में आपने जो देखा वह सम्पूर्ण भारत के प्रत्येक राजनैतिक चुनाव का ही एक भाग है। सम्पूर्ण भारत में उपर से नीचे तक की राजनीति पूरी तरह व्यवसाय है। इसमें कहीं भी समाज सेवा अथवा सम्मान की इच्छा महत्वपूर्ण नहीं है। कुछ गिने चुने लोग ऐसे हैं जो दस बीस प्रतिशत समाज सेवा तथा बीस तीस प्रतिशत सामाजिक प्रतिष्ठा को व्यवसाय के साथ जोड़कर राजनीति करते हैं जबकि अधिकांश लोग सौ प्रतिशत व्यवसाय मानकर राजनीति करने लगे हैं तथा ऐसी व्यावसायिक राजनीति करने वालों का प्रतिशत राजनीति में बढ़ता ही जा रहा है। धर्म का या समाज सेवा का व्यवसाय करने वालों का औसत भी राजनेताओके समान ही उफान पर है किन्तु राजनैतिक चरित्र तक प्रश्न सीमित होने से मेरा विश्लेषण भी वहीं तक सीमित रहना चाहिये।

यदि सम्पूर्ण राजनैतिक व्यवस्था ही एक व्यवसाय बन गई है तो ऐसी व्यवस्था में कोई राजनैतिक व्यक्ति वोट खरीदता और बेचता है तो उसमें इतने परेशान होने का कारण क्या है? पचपन वर्षों के जीवन में सन् चौरासी तक मैं सक्रिय राजनीति में रहा। वह कार्यकाल तो आज की अपेक्षा बहुत अच्छा था। किन्तु एक भी ऐसा कोई चुनाव नहीं हुआ जिसमें वोट खरीदे और बेचे न गये हों। ऐसी क्रय विक्रय प्रक्रिया में मैं स्वयं शामिल रहा। जब राजनीति एक व्यवसाय ही है तो मैं ऐसे व्यवसाय में किसी भी व्यक्ति को यह सलाह क्यों दूँ कि वह अपना माल किसी व्यवसायी को मुफ्त में दे दे। यदि आपको विश्वास हा कि देश का औसत राजनैतिक चरित्र व्यावसायिक न होकर समाज सेवा का है तब तो आप वोट क्रय विक्रय को अनैतिक मान सकते हैं अन्यथा इस क्रय विक्रय में न कोई अपराध है न ही अनैतिकता। किसी व्यक्ति विशेष को तभी अनैतिक कहना उचित है जब वह व्यक्ति अपनी बिरादरी के औसत चरित्र के आगे जाकर कोई गलत काम करे। अन्यथा ऐसे व्यक्ति की न आलोचना उचित है न सुधार के प्रयत्न क्योंकि व्यक्ति दोषी न होकर ब्यवस्था दोषी है। इस भ्रष्ट राजनैतिक व्यवस्था से लाभ उठा रहे राजनेता अधिक आगे आकर ऐसे व्यक्तियों के भ्रष्टाचार की चर्चा करते हैं क्यांकि ऐसी चर्चा के माध्यम से वे लोग अपनी पोल छिपाकर रखना आवश्यक समझते हैं। मेरा पहला सुझाव है कि वोटों का क्रय विक्रय व्यक्ति का चरित्र पतन न होकर राजनैतिक व्यवस्था का चरित्र पतन है।

यह स्थिति आदर्श तो नहीं कही जा सकती। इसका समाधान होना चाहिय। मैंने इस विषय पर बहुत सोचा समझा है। भ्रष्टाचार की उत्पत्ति अधिकारों के केन्द्रीयकरण से होती है। किसी राजनैतिक व्यवस्था में लोकतंत्र में अपराध रोकने की क्षमता दो प्रतिशत से ज्यादा नहीं हुआ करती। पूरे के पूरे अपराध तो रूक सकते ही नहीं क्योंकि वह मानव प्रवृत्ति है किन्तु यदि अपराध दो प्रतिशत तक सीमित हों तो उन्हें नियंत्रित करना संभव है। यदि राजनैतिक व्यवस्था अपने पास दो प्रतिशत ही पावर रखेगी तो भ्रष्टाचार की उत्पत्ति के अवसर दो प्रतिशत ही होंगे। गांधी जी के मरते ही हमारी राजनैतिक व्यवस्था ने समाज के अधिक से अधिक अधिकार अपने पेट में भरने शुरू कर दिये तो पहले तो अजीर्ण हुआ और अब बीमारी बढ़ते–बढ़ते असाध्य हो गई है। अब भी नेता लोग अधिकार समेटने में कंजूसी नहीं कर रहे। आपकी नगरपालिका के अध्यक्ष या पार्षद को जितने अधिकार प्राप्त हैं उनका अस्सी प्रतिशत नगर के आम लोगों को वापस कर दिया जाये तथा इनके पास बहुत कम अधिकार ही हों तभी भ्रष्टाचार की मात्रा घट सकती है अन्यथा यदि अधिकार इकट्ठे रहेंगे तो वोटों का क्रय विक्रय रूक नहीं सकता।

3.श्रीमती पूनम आई कौशिक पंजाब केशरी चौबीस अप्रेल दो हजार ग्यारह

सुझाव— कांग्रेस पार्टी की निरंतर गिरती साख चिन्ताजनक स्थिति तक पहुंच गई है। दो हजार चौदह तक पार्टी ने कुछ ठोस कदम नहीं उठाये तो जीतना मुश्किल हो जायेगा। वस्तु स्थिति का आकलन और कुछ सुझाव इस प्रकार हैं।

(1) पार्टी में अनुशासन घट रहा है। सोनिया जी की पकड़ कमजोर हो रही है।

(2) पार्टी आज वैयक्तिक सामंतवादी कार्यप्रणाली और सोच की गुलाम हो गई है। पार्टी में सबसे बुरी बात यह है कि आन्तरिक लोकतंत्र का अभाव हो गया है।

(3) प्रधानमंत्री के पास शक्ति नहीं है। हर छोटी बात के लिये भी वे स्वतंत्र निर्णय नहीं ले पाते।

(4) भारतीय जनता पार्टी की हालत भी ठीक नहीं है। क्षेत्रीय दलों का हाल तो और भी खराब है। कांग्रेस पार्टी से कुछ उम्मीद थी तो वह भी धूमिल होती जा रही है।

(5) कांग्रेस पार्टी दो संकटों से जूझ रही है (क) मजबूत नेतृत्व का संकट (ख) आन्तरिक लोकतंत्र का अभाव। पार्टी की सोच इतनी वंशवादी हो गई है कि पार्टी नेताओं को इसके अलावा कुछ सुझता ही नहीं।

(6) मेरा सुझाव है कि पार्टी में सोनिया जी मजबूती से सामने आकर निर्णय लें तथा पार्टी में आन्तरिक लोकतंत्र को मजबूत करें तभी कांग्रेस की नैया पार लग सकती है।

समीक्षा– मैं आपके लेख पढ़ता रहा हूँ। प्रस्तुत लेख में आप क्या कहना चाहती हैं और क्या सुझाव हैं ये मेरी समझ में नहीं आया। सोनिया जी मजबूती से निर्णय लें, कठोर अनुशासन हो, मजबूत नेतृत्व हो यह बात आपने कई जगह लिखी तो दूसरी ओर यह भी लिख दिया कि पार्टी परिवार वाद से बाहर निकले, पार्टी में आन्तरिक लोकतंत्र हो, प्रधानमंत्री को अधिक मजबूत किया जाय। ये दोनों बातें एक साथ कैसे संभव हैं। आपने दो विपरीत सुझाव एक ही लेख में एक साथ देकर तो कमाल का काम किया है। साथ ही आपने यह भी लिख दिया कि कांग्रेस का जीतना मुश्किल है तो यह नहीं लिखा कि कांग्रेस की जगह भाजपा का बढ़ना संभव है या क्षेत्रीय दलों का।

मेरे विचार में स्वतंत्रता के बाद पहली बार भारतीय राजनीति लोकतंत्र की दिशा में सरकनी शुरू हुई है। कांग्रेस पार्टी में परिवार वाद की जड़ें कमजोर हो रही हैं। मनमोहन सिंह सरकार कांग्रेस पार्टी की चौकड़ी के लाख प्रयत्नों के बाद भी टिकी हुई है। राहुल गांधी की राजनैतिक हालत ने भी सोनिया जी को चिन्ता में डाल दिया है। आज कल तो हालत यह है कि मनमोहन सिंह जी को लगातार परेशान करने के उद्देश्य से बनी राष्ट्रीय सलाहकार समिति की भी बोलती बन्द हो गई है। मनमोहन सिंह लगातार मजबूत हो रहे हैं और उनकी मजबूती से ही परिवार वाद कमजोर होकर लोकतंत्र मजबूत हो रहा है। मनमोहन सिह जी के पूर्व तक तो सेना की आंतरिक स्थिति पर चर्चा तक करना संकटकारी होता था। अब तो गली चौराहे पर भी सेना की चर्चा आम हो गई है। मैं मानता हूँ कि यह भी कोई अच्छी बात नहीं किन्तु जैसी तानाशाही साठ वर्ष से लोकतंत्र के नाम पर चली उसकी अपेक्षा तो यह बात ज्यादा खराब नहीं। लोकतंत्र और तानाशाही के अलग अलग गुण भी होते हैं आर दोष भी। तानाशाही में व्यवस्था भी होती है और अनुशासन भी। लोकतंत्र में अव्यवस्था होना स्वाभाविक है। दोनों मार्ग पर चलना संभव नहीं जैसा कि अस्पष्ट सुझाव आपका है।

यदि अन्ना जी के मार्गदर्शन में कोई नई हालत नहीं बन पाई तो जैसी हालत अभी है लगभग वही आगे भी रहेगी। आपके अनुसार कांग्रेस की हालत कमजोर दिख रही है तो अच्छी किसकी दिख रही है? भाजपा की? या क्षेत्रीय दलों की? कहीं कुछ भी स्पष्ट नहीं है। दिल्ली में कांग्रेस हार गई तो उत्तरांचल में जीत गई। गुजरात जो प्रधानमंत्री के दावेदार नरेन्द्र भाई का गढ़ है वहॉ की नवीनतम सीट कांग्रेस ने जीत ली। अतः अपरिपक्व आकलन प्रस्तुत करना ठीक नहीं। सोनिया जी का परिवार वाद कमजोर हो रहा है और मनमोहन सिंह का लोकतंत्र मजबूत। संघ की पकड़ घट रही है और भाजपा की पकड़ मजबूत है। जिन्ना की तारीफ करने वाले जसवंत सिंह और अडवाणी अब भी बने हुए हैं। साम्यवादी विचार धारा को जनता नकार रही है और नीतिश कुमार, अखिलेश यादव लगातार स्थापित हो रहे हैं। परिवर्तन दिख रहा है। कुछ भी लिखकर भ्रम पैदा करना ठीक नहीं।

मेरा व्यक्तिगत मत है कि साठ वर्षों की परिवार वादी तानाशाही तथा तीन वर्षों के मनमोहनी लोकतंत्र के बीच सीधा टकराव चल रहा है। लड़ाई निर्णायक दौर में है। सोनिया जी यदि राहुल गांधी को प्रधान मंत्री बनाने की तिकड़में करना छोड़ दें तो कांग्रेस का भविष्य संकट में नहीं दिखता अन्यथा कांग्रेस रहेगी या जायेगी यह ज्यादा चिन्ता की बात नहीं। चिन्ता की बात यह है कि कहीं हमारी लोकतंत्र की राह फिर से पीछे की ओर न मुड़ जाये।

4.विस्फोट डाट काम

विचार–कांग्रेस प्रवक्ता अभिषेक मनु सिंघवी की एक कथित सेक्स सीडी ने कांग्रेस समेत पूरी सियासी बिरादरी में बखेड़ा कर दिया है। चूंकि अभिषेक मनु सिंघवी ने सर्वोच्च न्यायालय में कामयाबी हासिल कर ली है। समाचार है कि उन्होंने अपने पूर्ववर्ती ड्राइवर और मीडिया संस्थान के साथ सेक्स सीडी कांड पर अदालत के बाहर समझौता कर मामले को लगभग रफा–दफा भी कर दिया है। संभव है कि कुछ दिनों के बाद वे इस कांड की परच्छाई से मुक्त होकर फिर से कांग्रेस के विचारों के प्रचार–प्रसार में जुट भी जाएं।

देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू से लेकर भावी प्रधानमंत्री राहुल गांधी तक के खिलाफ तरह–तरह के सेक्स संबंधों के आरोप उछलते रहे हैं। इस तरह के आरोपों में तमाम आरोप आधारहीन और विशुद्ध गॉसिपिंग के अलावा कुछ नहीं हुआ करते, ऐसी प्रबल धारणा वाला बड़ा वर्ग है। जिन मामलों में तथ्य भी होता है उनमें कानून की बारीकियों और निजता की गोपनीयता के चलते किस्सों को स्कैंडल में बदलने की ताकत नहीं हुआ करती। पं. नेहरू के संबंधों के तमाम किस्से राजनीतिक हल्कों में सुने–सुनाए जाते रहे। जब तक उनके प्राइवेट सेक्रेटरी एम. ओ. मथाई ने अपनी पुस्तक में उन पर आरोप नहीं लगाए तब तक क्या किसी की हिम्मत थी कि पं. नेहरू की झक सफेद पोशाक पर कोई दाग लगा देता? महात्मा गांधी के प्रपौत्र राजमोहन गांधी ने स्वयं टैगोर परिवार की एक महिला के प्रति महात्मा गांधी की आसक्ति का वर्णन किया है। आसक्ति–प्यार और सेक्स तीनों का अंतर राजनीति की गली में गड्डमड्ड हो जाया करता है। उदारवाद के दौर में वस्तुवाद की जो हवा चली है उसमें नारी देह को एक 'प्रॉडक्ट' के तौर पर स्थापित कर दिया गया है। आधुनिक तंत्रज्ञान ने नारी नामक 'प्रॉडक्ट' को सफलता का सूत्र भो बना दिया है।

राजनीति के मैदान में सफलता का प्रतिशत कभी दहाई के आंकड़े को नहीं छू पाता। लिपा–पुता 'प्रॉडक्ट' उंचे पायदान पर पहुंचाने की जब सफलतम सीढ़ी बना दी गई हो तब हमाम की नंगई सर्वज्ञात और सर्वमान्य होना स्वाभाविक है। अभिषेक मनु सिंघवी जिस महिला को जज बनाने का कथित दावा कर रहे थे वह महिला सफलता की इस चूहादौड़ में अकेली नहीं। तमाम महिलाओं की राजनैतिक सफलता को यौन क्षमता के मापदंड पर नापा जाता रहा है। तारकेश्वरी सिन्हा से इंदिरा गांधी की चिढ़ क्या थी? अंबिका सोनी से मेनका गांधी की पटरी क्यों नहीं बैठी? राबड़ी देवी को कांति सिंह से क्या रंज रहा होगा? साधना (गुप्ता) यादव का आज भी सैफई का यादव कुनबा अपना क्यों नहीं मान पाता? अनिता सिंह की मुख्यमंत्री सचिवालय में नियुक्ति पर अखिलेश सिंह यादव ब्रिगेड की पेशानी पर बल क्यों पड़ जाता है? अमर सिंह से करीबी होते ही मुलायम सिंह यादव लंगोट के ढीले क्यों मान लिए जाते हैं? एक सेक्स सीडी संजय जोशी के उज्जवल राजनीतिक कैरियर को तबाह कर देती है। जबकि वही राजनीतिक विचारधारा कल्याण सिंह की कुसुम राय को राज्यसभा भेजने में कोई खोट नहीं पाती। जयललिता भले ही आजन्म कुंवारी रह गई पर एमजी रामचंदन से उनकी नजदीकियों को किसने शक की निगाह से नहीं देखा? मायावती से श्रेष्ट कांशीराम के राजनैतिक वारिस का नाम बामसेफ और डीएसफोर के जमाने से बसपा की बारीक समझ रखने वाला भी नहीं बता पाएगा, पर ऐसा कौन बचा है जिसने मान्यवर कांशीराम पर शक की उंगली न उठाई हो? हर जिले, हर राज्य की राजनीति में सेक्स कांड शीर्ष पर पहुंचने के किस्से बिखरे पड़े हैं। विपरीत लिंगियों की पवित्र दोस्ती को भी देखनेवाला शक की निगाह से देखता है। कुछ ऐसे किस्से भो हैं जो राजनीति के आदर्श पथ को गलिच्छ बनाते आए हैं। सन् 2009 में जब 86 वर्षीय नारायण दत्त तिवारी राजभवन में नग्न बालाओं से कामोत्तेजक मुद्रा में घिरे पाए गए और तेलुगु चैनल ने जब उनका पर्दाफाश किया तो किसने उत्तराखंड के 'विकास पुरूष' को नहीं धिक्कारा होगा? नवीन पटनायक के मंत्रिमंडल में राजस्व मंत्री रहे मनमोहन सामल को सेक्स स्कैंडल का पर्दाफाश होते ही इस्तीफा देना पड़ा। राजस्थान के एक पूर्व मंत्री महिपाल मदेरणा का नाम भी भंवरी देवी सीडी कांड में सामने आया है।

प्कश्मीर का सेक्स स्कैंडल तो जम्मू एवं कश्मीर के मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला के गिरेबान तक पहुंच गया था। मधुमिता शुक्ला के 'प्यार–सेक्स आर धोखा' के रंगीन कांड में अमरमणि त्रिपाठी आज दिन तक जेल काट रहे हैं। बीते दिनों विजय बहुगुणा जब उत्तराखंड के मुख्यमंत्री बनाए गए तब केन्द्रीय मंत्री हरीश रावत के अलावा एक और नाम मुख्यमंत्री पद के लिए सुर्खियों में आया था, वह नाम था हरक सिंह रावत का। जब पिछली कांग्रेस सरकार में हरक सिंह रावत राजस्व मत्री थे तो उन पर एक असमी लड़की से शादी का झांसा देकर बलात्कार करने का आरोप लगा था। उड़ीसा में कांग्रेसी मुख्यमंत्री जे. बी. पटनायक पर सेक्स स्कैंडल का आरोप लगाा तो उन्हें अपनी कुर्सी गंवानी पड़ी। केरल में मुस्लिम लीग का एक नेता पी. के. कुंजनअली कुट्टी तो बाकायदा चकलाघर चलाया करता था। उसके चकलाघर का पर्दाफाश हुआ तो उक्त मामला 'आइसक्रीम पार्लर स्कैंडल' के नाम से कुख्यात हुआ। 1980 के दशक में बॉबी हत्याकांड की जांच में जिस तरह के सेक्स स्कैंडल का पर्दाफाश हुआ था उससे तत्कालीन जगन्नाथ मिश्रा सरकार की चूलें हिल गइ थीं। 1977 में जब जनता पार्टी की सरकार थी तब मेनका गांधी द्वारा प्रकाशित 'सूर्या' पत्रिका ने बाबू जगजीवनराम के बेटे सुरेश राम का एक सेक्स स्कैंडल जगजीवन राम के प्रधानमंत्री बनने के सपने को चकनाचूर कर गया था। सुषमा चौधरी नामक एक कॉलेज छात्रा के साथ सुरेश राम की आपत्तिजनक स्थिति की तस्वीरों ने इस देश को प्रथम दलित प्रधानमंत्री के गौरव से मरहूम कर दिया। ये तो कुछ किस्से हैं जो आमजनों में चर्चित रहे। लोकतंत्र के तीनों स्तंभ अपरिमित यौनेच्छाओं के शिकार रहे हैं।

यहां तो सेज सजाने की क्षमता रखने वाले राजनोतिक सत्ता के अहम हिस्सेदार हुआ करते हैं। सीताराम केसरी की जो सेवा करने में समर्थ हुआ उसे कांग्रेस का तारणहार बना दिया गया। एशियाइ खेलों में जिस राजनेता ने सत्ता की यौनेच्छापर समर्पित खूबसूरती उपलब्ध कराई उसे प्रधानमंत्री कार्यालय का चोपदार बना दिया गया। ऐसे तमाम मंत्री–मुख्यमंत्री मिल जायेंगे जिन्हें दिल्लीवाले किसी न किसी शीर्ष नेता की अय्याशी का भूतपूर्व प्रबंधक बताते हैं। मुंबइ में तो कांग्रेस का अध्यक्ष पद ऐसे व्यक्ति को दिया गया था जिसके दिल्ली पहुंचने पर कांग्रेस मुख्यालय में नारा लगता था 'दढ़ियल नेता आया है, दर्जनभर चूजे लाया है।' यहां चूजे का मतलब होता था सेज सुख उपलब्ध कराने वाली बाला। जब राजनीति की गली खुद मीनाबाजार में तब्दील हो गई तो किसी को अभिषेक मनु सिंघवी की एक सेक्स सीडी पर इतना हंगामा खड़ा करने से क्या हासिल होगा?

उत्तर–आपने जितना विस्तृत विवरण दिया है उतना मैं नहीं जानता था। कुछ घटनाओं तक ही मैं सीमित था। अभिषेक मनु सिंघवी के विषय में जो कुछ सामने आया है वह यदि सच भी हो तो वह अनैतिक तक ही सीमित है, इसके आगे नहीं। ऐसे मामलों में चरित्रवान लोग शायद ही आगे आकर चर्चा करते हों। आम तौर पर छिप छिप कर ऐसा करने वाले अपना चरित्र उॅचा प्रमाणित करने के लिये ही ऐसी चर्चा बढ़ाया करते हैं। यदि ऐसी घटना किसी और के साथ हाती और वह भाजपाई होता तो सिंघवी जी भी ऐसे चटखारे लेकर चर्चा करते। कर्नाटक या गुजरात विधान सभा अश्लील सीडी प्रकरण बहुत पुराना नहीं है।

स्त्री और पुरूष के बीच अवैध आकर्षण कोई नई बात नहीं है। यह एक प्राकृतिक भूख होती है जिसे स्वतः को समझाकर, विवाह द्वारा पूरी करके, महिला पुरूष के बीच दूरी बढ़ाकर, समाज की आलोचना के डर से या वैश्या वृत्ति द्वारा ही नियंत्रित किया जा सकता है। यदि इसे ज्यादा बल पूर्व दबाया गया तो नुकसान की ज्यादा संभावना रहती है। प्राचीन समय में भी राजाओं या देवी देवताओं तक की बातें आती रहती हैं। आपने जो चर्चा की वह केवल उन लोगों तक ही सीमित नहीं है। समाज का औसत चरित्र वैसा ही है। सक्षम लोग साधन सम्पन्न होने से कुछ आगे बढ़ जाते हैं और कमजोर लोग गली कूचों तक सीमित होकर चर्चा से बाहर रह जाते हैं।

जब हमारे देश के राजनेताओं ने महिला सशक्तिकरण के नाम पर अनिच्छुक महिला पुरूष के बीच भी दूरी घटाने की कवायद शुरू की तो ऐसी घटनाएॅ बढ़ने का अंदाज था। कुछ नेताओं ने तो ऐसे प्रयत्न को सुविधा जनक भी माना हो तो कोई नई बात नहीं। महिला सशक्तिकरण के लिये जो स्त्री पुरूष ज्यादा जोर मारते हैं उनमें महिला सशक्तिकरण की आदर्श स्थिति मानने वालों की संख्या औसत से बहुत कम तथा सुविधा जनक मानने वालों की संख्या औसत से बहुत ज्यादा दिखती है। महिला और पुरूष यदि दूरी घटाने के लिये कुछ ज्यादा ही जोर लगाते हैं तो सतर्क होने की जरूरत है। अनेक महिलाएॅ तो लगातार आवाज उठाती रहतो हैं कि यह दूरी घटे। अनेक पुरूष भी ऐसे प्रयत्न करते देखे जाते हैं। हमें या तो अपने सामाजिक ढांचे में बदलाव करना होगा या ऐसी संभावित दुर्घटनाओं के प्रति सहनशील होना पड़ेगा। पहले आग

और बारूद की दूरी घटाई जाय और जब बलास्ट हो तो दूसरों को दोष दें यह ठीक नहीं। सिंघवी जी का सीडी प्रकरण किसी भी दृष्टि से चर्चा का विषय न है न होना चाहिये। अन्ना जी ने इस प्रकरण के संदर्भ मे कहा कि ऐसे लोगो को फांसी दे देनी चाहिये। ऐसे सेक्स के मामलो मे अन्ना जी अनुभवहीन है । अगर ऐसे मामलो मे फांसी दी जायगी तो बलात्कार या सामूहिक बलात्कार जैसे मामलो मे अन्ना जी फांसी से आगे जाकर क्या मांग करेंगे? हर मामले मे कुछ भी बोल देना कोई अच्छी आदत नही है। विशेष कर ऐसे मामलो मे जिनका कोई अनुभव अन्ना जी को नही हैं ।

एक नेता ने लिखा है कि वकील का चेम्बर एक न्यायालय का भाग है। उसकी एक पवित्रता है। वह एक सार्वजनिक स्थान है। मेरे विचार में यह लेखन उक्त नेता द्वारा तिल का ताड़ बनाने जैसी बात है। वकील का चेम्बर व्यक्तिगत होता है। वहॉ कौन सा ऐसा अपराध हो गया जिससे न्यायालय की पवित्रता भंग हो गई। जो हुआ वह नैतिकता के उच्च मानदण्डों के विरूद्ध होने से अनैतिक काय था यहॉ तक तो ठीक है किन्तु इसके आगे बढ़कर तूल देना उचित नहीं दिखता।

5. श्री सिद्धार्थ शंकर गौतम, नवभारत दैनिक बिलासपुर छत्तीसगढ़

विचार– ऐसा लगता है कि माओवाद के विरूद्ध निर्णायक युद्ध का समय आ गया है। उड़ीसा विधान सभा के विधायक झीना हकाका का अपहरण करके डंके की चोट पर शर्तें रखना आखिर क्या दर्शाता है। कुछ दिनों पूर्व ही दो इटालवी नागरिकों का अपहरण करके अपने कई साथियों को जेल से रिहा कराने में ये सफल हो चुके हैं। छत्तीसगढ़ का घटनाक्रम भी आप देख ही रहे हैं। ऐसा लगता है जैसे कि सरकार किसी बड़े अनिष्ट की प्रतीक्षा कर रही हो।

मेरे विचार में पानी सर के उपर जा रहा है। दूसरी ओर हमारी सरकारें यह निर्णय करने में ही उलझी हुई हैं कि इस समस्या का समाधान करने में राज्य और केन्द्र की भूमिका के योगदान का बंटवारा कैसा हो? जब केन्द्र सरकार ने माओवाद को राष्ट्रीय समस्या मानकर अपनी भूमिका बढ़ाने की बात की तो केन्द्र राज्य संबंधो के असंतुलन की सबसे पहली चिन्ता उड़ीसा के नवीन पटनायक को ही हुई। दूसरी ओर अपहरण के बाद नक्सलियों के समक्ष झुकने मे भी नवीन पटनायक ने इतिहास ही रच डाला। अपनों के समक्ष इतनी अकड़ और शत्रु के समक्ष इतनी कमजोरी कोई अच्छी बात नहीं। अब समय आ गया है कि केन्द्र और राज्य सरकारें मिल जुलकर इस समस्या से निपटने की पहल करें।

उत्तर– व्यक्ति समाज का अंग होता है और नागरिक राष्ट्र का। व्यक्ति की सुरक्षा सम्पूर्ण समाज का दायित्व होता है जो राष्ट्र तक ही सीमित नही होता। किसी विश्व व्यवस्था के अभाव में राष्ट्र कुछ कुछ यह भ्रम भले ही पाल लें किन्तु वास्तविकता वैसी नहीं। सुरक्षा के मामले में प्रदेश की तो कोई अन्तिम भूमिका हो ही नहीं सकती क्योंकि जो विषय केन्द्र सरकार से भी उपर तक गया हुआ है उसमें प्रदेश को पैर फंसाना ठीक नहीं। संकट बड़ा नहीं होने से यह काम प्रदेश को दिया गया था किन्तु अब यदि संकट बड़ा है तो केन्द्र को यह काम उठा ही लेना चाहिये।

आश्चर्य तो यह है कि जो काम निचली इकाइयों का है वह तो केन्द्र कर रहा है और जो केन्द्र का है वह प्रदेश के भरोसे छोड़ा गया है। यदि आवश्यक हो तो संविधान में संशोधन करके भी यह भूल सुधारी जा सकती है। व्यक्ति को सुरक्षा और न्याय देना प्रत्येक इकाई का कर्तव्य है चाहे वह व्यक्ति हो या समाज। साथ ही सुरक्षा समाज द्वारा नियुक्त राजनैतिक व्यवस्था का दायित्व भी है जिसमें हर नीचे वाली इकाई हर उपर वाली इकाई की सहायता करती है। पता नहीं कि नवीन पटनायक जी ने यह कैसे पढ़ लिया कि सुरक्षा का मामला सिर्फ प्रदेश का है जिसमें बिना प्रदेश की सहमति के केन्द्र कुछ नहीं कर सकता। ऐसा ही कुतर्क तो सद्दाम भी द रहा था और गद्दाफी भी। अमेरिका ने पहल करके सबको निपटा दिया और पूरी दुनिया में अमेरिका की प्रशंसा हुई। साम्यवादी और कुछ इस्लामिक तानाशाह अमेरिका को गाली देते ही रह गये और अब भी देते रहते हैं किन्तु पूरी दुनिया में यह विचार लगातार बढ़ता जा रहा ह कि मनुष्य सम्पूर्ण मानव समाज का एक अंग है, किसी देश या प्रदेश तक ही नहीं।

नक्सलवाद की समस्या एक बहुत बड़ी खतरनाक रूप ग्रहण कर चुकी है। समाज में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो किसी स्वार्थ वश नक्सलवाद के समथक हैं और कुछ लोग भ्रम वश। कुछ वर्ष पहल ऐसा लगता था कि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन का एक हिंसक मार्ग मात्र है। लक्ष्य उसका व्यवस्था परिवर्तन तक है। अब पूरी तरह स्पष्ट है कि नक्सलवाद कहीं व्यवस्था परिवर्तन नहीं है। यह तो शुद्ध रूप से सत्ता संघर्ष है। व्यवस्था परिवर्तन वाला नक्सलवाद तो पिछल वर्ष ही कानू सान्याल क साथ आत्महत्या करके मर गया। ब्रम्हदेव शर्मा एक बहुत ही अच्छे व्यक्ति हैं किन्तु ये अब तक यही भ्रम पाले हुए हैं कि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन है। दिग्विजय सिंह सत्तारूढ़ पार्टी के महासचिव हैं। उन्हें विश्वास है कि भविष्य में नक्सलवादी अपनी सरकार बनाने में सफल हो जायेंगे। इसलिये ये नक्सलवाद के खिलाफ निर्णायक संघर्ष नहीं छिड़ने देकर दोनों हाथों में लड्डू रखना चाहते हैं। कांग्रेस पार्टी के कथित युवराज राहुल गांधी का उन्होंने नक्सलवाद के संबंध में ब्रेनवाश कर रखा है। अग्निवेष जी एक विचित्र जीव हैं। पता ही नहीं चलता कि वे वास्तव में किस पक्ष के हैं। अन्य अनेक लोग ऐसे हैं जिनकी परोक्ष सहानुभूति नक्सलवाद के प्रति हैं। और ऐसे लोग यदा कदा बोलते भी हैं कि नक्सलवाद को प्रशासनिक तरीके से निपटाना संभव नहीं। अजीत जोगी सरीखे कई लोग आपको मिल जायेंगे। जबकि स्पष्ट है कि वर्तमान समय में नक्सलवाद सिर्फ प्रशासनिक स्तर पर ही निपटाया जा सकता है। विकास के कार्य उसके बाद होने चाहिये। ममता बनर्जी स्वयं में एक विचित्र जीव है। उसे अपनी प्रगति के अलावा कुछ दिखता ही नहीं। वह तो इतनी जल्दी जल्दी रंग बदलती है कि गिरगिट भी पीछे रह जायें। आप विचार करिये कि इतने प्रकार के जीव आपकी मशीन में महत्वपूर्ण जगहों पर स्थापित हैं तो आप किनके भरोसे निर्णायक संघर्ष का आह्वान करेंगे। यह अकेले मनमोहन सिह चिदम्बरम का भी प्रश्न नहीं और न ही रमण सिंह नवीन पटनायक का है। इस प्रश्न के समाधान में सोनिया राहुल की बड़ी भूमिका है जिनकी सर्वोच्च सलाहकार समिति में कई नक्सलवाद हितैषी भी बैठे हुए हैं चाहे वे नासमझी से वैसा सोचते हों या स्वार्थवश। अतः निर्णायक संघर्ष के पूर्व या तो ऐसे तत्वों से निपटना होगा या निपटाना होगा तभी कोई निर्णायक पहल संभव है। पी8

6 श्री गौरी शंकर राजहंस, हरिभूमि सत्रह फरवरी 12

विचार– हाल हाल तक चीन में सारी दुनिया के उद्योगपति उद्योग लगा रहे थे जिसका एक प्रमुख कारण यह था कि वहां सस्ती दरों पर मजदूर मिल जात थे। उपभोक्ता वस्तुएं, बड़ी मशीनें, मोटरगाड़ियां, ट्रक, ट्रक के टायर, इलेक्ट्रोनिक सामान खासकर मोबाइल आदि चीन के तटीय शहरों में बहुत बड़े पैमाने पर उत्पादित होते थे। जिन्हें विदेशों में खासकर अमेरिका और यूरोप की मंडियों में बहुत बड़े पैमाने पर निर्यात किया जाता था। इस विषय में एक दिलचस्प बात यह है कि भारत के भी कई बड उद्योगपतियों ने सस्ते श्रम के लालच में चीन में कई कारखाने लगाये और वहां उत्पादित सामान को भारत को निर्यात किया।

चीन में श्रम के सस्ता होने का एक मुख्य कारण यह है कि वहां हर वर्ष गांव देहात से करोड़ों मजदूर शहरों में आते हैं। फिर कुछ महीने वहॉ के कारखानों में काम करके अपने गांव लौट जाते हैं। हाल हाल तक ये मजदूर बहुत कम मजदूरी पर काम करते थे और इनसे साधारण रूप से कंपनियों के मालिक 10 से 12 घंटे काम लिया करते थे। उन्हें कोई साप्ताहिक अवकाश नहीं मिलता था और मजदूरी भी बहुत कम मिलती थी। सस्ते श्रम के लालच में अमेरिका, जापान, दक्षिण कोरिया और ताइवान की ढेर सारी कंपनियों ने चीन के तटीय शहरों में बेशुमार कारखाने लगाये और उपभोक्ता वस्तुएं तथा औद्यागिक वस्तुएं बनाकर उन्हें विदेशों को निर्यात किया।

नई पोढ़ी के युवक जिनका जन्म 80 के दशक में हुआ था उन्होंने माओत्सेतुंग का अत्याचार नहीं देखा था। और न तो 'ग्रेट लीप फारवर्ड' और न 'कल्चरल रिवोल्यूशन' को देखा था जिसमें मजदूरों से निर्दयतापूर्वक काम लेकर बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। उस पीढ़ी के लोग अब बहुत बूढ़े हो गये हैं और अक्सर अपने बाल–बच्चों से कहते हैं कि वे अपना सौभाग्य मानते थे यदि उन्हें दो वक्त का भोजन मिल जाता था। वे बड़े बड़े कम्युनिटी हाल में रहते थे। निजी आवास का तो प्रश्न ही नहीं उठता था।श्रमिक की भूमिका एक मशीन से अधिक कुछ नही थो। परन्तु 80 के दशक में जन्मे हुए नई पीढ़ी के युवक कह रहे हैं कि उनके बाप–दादाओं ने यदि जी तोड़ परिश्रम किया होगा तो वह चीन के आर्थिक विकास के लिए किया होगा। परन्तु आज तो चीन में निजी कंपनियों की भरमार ह और अधिकतर कंपनियां विदेशी हैं। वे ढेर सारा लाभ कमाकर अपने देश लौट जाती हैं। मजदूरों को कठोर परिश्रम करने से क्या लाभ मिलता है? अतः गत दो वर्षों से चीनी मजदूरों में यह प्रवृत्ति आ गई है कि बसंत उत्सव में जब वे अपने गांव जाते हैं तो उनमें से अधिकतर लोग वापस अपने कारखानों में नहीं आते हैं। उनका कहना है कि जब तक उनकी मजदूरी अन्य देशों के मजदूरों की तरह नहीं बढ़ाई जाएगी वे काम पर नहीं लौटेंगे।

हाल में जो सरकारी आंकड़ा प्रकाश में आया है उससे ऐसा लगता है कि इस वर्ष प्रायः 60 लाख मजदूर जो बसंत उत्सव के लिए अपने गांव गये थे वे लाख प्रलोभनों के बावजूद भी शहरों में अपने कारखानों में नहीं लौट रहे हैं। इसके कुछ महीने पहले समुद्री तट पर स्थित कछ बड़ी कंपनियों के मजदूरों ने अचानक हड़ताल कर दी थी। चीन में हड़ताल की यह पहली घटना थी। ताइवान की एक बड़ी कंपनी 'फोक्सकोन' जो संसार की इलेक्ट्रोनिक सामान बनाने वाली सबसे बड़ी कंपनी है और जो लाखों की संख्या में कम्प्यूटर, मोबाइल फोन, टीवी, वीडियो आदि बनाकर सस्ते दामों में विदेशों को निर्यात करती है, उसके मजदूरों ने एकाएक हड़ताल कर दी और मैनेजरों के लाख समझान के बावजूद भी वे काम पर नहीं लौटे। यह कंपनी अपने मजदूरों को इतना कम वेतन देती थी कि अनेक मजदूर आत्महत्या करने

के लिए मजबूर हो गये थे। हाल हाल तक इस कंपनी में 4 लाख चीनी मजदूर काम करते थे। जब मजदूरों ने कम मजदूरी, पेंशन का अभाव अधिक घंटों तक काम करने और विभिन्न तरीकों से उनके शोषण की बात की तो इन कंपनियों के मैनेजरों ने उन्हें एक एक कर निकालना शुरू कर दिया। आर्थिक मजबूरी के कारण ये मजदूर फिर भी काम करते रहे। लेकिन जब मजदूरों की आत्महत्या की बात फैलने लगी तो उन्होंने एकाएक हड़ताल कर दी। यह हड़ताल महीनों चली। अंत में इस कंपनी के मालिकों को लाचार होकर मजदूरों की मजदूरी 30 प्रतिशत बढ़ानी पड़ी। जैसे ही यह खबर चीन की अन्य विदेशी कंपनियों के कारखानो में काम करने वाले मजदूरों में फैली, उन्होंने भी एकाएक हड़ताल कर दी। 1949 से आज तक चीन के मजदूरों को हड़ताल का अनुभव ही नहीं था क्योंकि वहां पर सरकार बहुत ही कठोर कदम उठाकर मजदूरों से काम लेती है और किसी भी हालत में हड़ताल को पनपने नहीं देती है। परंतु जब मजदूरों का आंदोलन जंगल की आग की तरह फैल गया तब लाचार होकर इन कपनियों के मालिकों और मैनेजरों को मजदूरों को 30 प्रतिशत मजदूरी बढ़ानी पड़ी।

चीन में मजदूरों को हड़ताल का अनुभव नहीं था। जहां जहां वे हड़ताल या प्रदर्शन कर रहे हैं वहां वे बड़े शांतिपूर्ण तरीके से कारखानों में जाते हैं और चुपचाप बैठे रहते हैं। जो लोग गांव देहात गये हैं वे लाख प्रलोभन के बावजूद शहरों के कारखानों में वापस नहीं आ रहे हैं। नई पीढ़ी के युवकों में धीरे धीरे जागृति आ रही है। उनमें यह भावना फैल रही है कि विदेशी पूंजीपति उनका शोषण कर ढेर सारा पैसा अपने देश ले जाते हैं। यह सिलसिला शीघ्र से शीघ्र समाप्त होना चाहिए।

समीक्षा– मैंने जब से होश संभाला तब से ही मेरा यह विचार रहा कि साम्यवाद दुनिया की सबसे अधिक अमानवीय समाज व्यवस्था है। चीन को देखकर आने वाले कुछ लोग चीन की व्यवस्था की इतनी प्रशंसा करत थे जैसे कि वह स्वर्ग ही हो। बाद में पता करने पर सच्चाई सामने आती थी कि ऐसे सारे लोगों को उस व्यवस्था में इसलिये स्वर्ग दिखता था कि वही एकमात्र व्यवस्था थी जिसके आधार पर चलकर समाज को गुलाम बनाकर रखा जा सकता है। समाज को गुलाम बनाकर रखने वाली दूसरी व्यवस्था पूंजीवाद है जिसमें राजनैतिक सत्ता बदलने के खतरे साम्यवाद की अपेक्षा ज्यादा हैं। साम्यवाद में ऐसे खतरे नाम मात्र हैं।

मैं यह तो समझता था कि साम्यवादी देशों में आम नागरिकों का राष्ट्र के नाम पर अवश्य ही शोषण होता होगा। किन्तु मेर पास कोई प्रमाण नहीं था जब तक यह लेख नहीं पढ़ा था। मेरे एक मित्र उद्योग पति प्रमोद कुमार वात्सल्य जी चीन के बहुत प्रशंसक हैं। मेरी उनसे कई बार बहस होतो थी तो वे यह कहकर मजबूत हो जाते थे कि उन्होंने तो चीन को स्वयं देखा है जबकि मैं सुनी सुनाई बात कहता हूँ। माओत्सेतुंग तक तो चीन जल्लादी लौह आवरण में जकड़ा हुआ था। अब आवरण कुछ हटा तो दुनियां के उद्योग पतियों को यह स्थान स्वर्ग दिखना गलत नहीं था। मजदूर मजदूरी मांग नहीं सकते थे। सरकार जो कुछ दे देती थी वह उसकी दया थी, मजदूरों का अधिकार नहीं क्योंकि उनका तो सारा खून पसीना देश के लिये है और देश का मतलब होता है माओ। आप देश के लिये काम करने योग्य बने रह उतना आपको देना हमारा कर्तव्य है। अब जैसी बातें सामने आ रही हैं उनसे वात्सल्य जी की बोलती बन्द है। अभी तो चीन के श्रम शोषण का लम्बा इतिहास खुलना बाकी ही है। यह संभव ही नहीं था कि चीन का माल भारत में तब तक इतना सस्ता बिके जब तक श्रम का बिल्कुल अमानवीय शोषण न हो। कृत्रिम उर्जा में चीन भारत से अलग नहीं। खनिजों के स्तर पर भी लगभग समानता है। यदि कोई अन्तर था तो वह था श्रम मूल्य का। यदि वहॉ भी श्रमिक क्रान्ति आंशिक रूप से भी मानवीय दिशा में बढ़ी तो चीन भारत से आगे नहीं जा सकता।

राष्ट्रीय विकास दर और मानवीय विकास दर के बीच तालमेल आवश्यक है। चीन ने राष्ट्रीय विकास दर के लिये अब तक मानवीय विकास दर की बलि चढ़ा दी। मनुष्य को साधन से ज्यादा कुछ नहीं समझा गया। जब वहॉ मानवीय विकास दर ऋणात्मक थी तो राष्ट्रीय विकास दर की लम्बी छलांग लगनी ही थी। चीन सामरिक मामलों तक में अमेरिका के मुकाबले खड़ा था। चीन जब चाहे पड़ोसियों को डरा धमका सकता था क्योंकि उसके पास अन्य सभी दशों की अपेक्षा बड़ी संख्या में कटने मरने से लेकर कल कारखानों में काम करने तक तो मजबूर तैयार गुलामों की कमी नहीं थी। अब उसे आटे दाल का पता चलेगा जब राष्ट्रीय विकास दर के साथ साथ मानवीय विकास दर की भी गणना शुरू हो चुकी है। इस संबंध में अन्य विद्वाना के भी विचार आमंत्रित हैं।

साम्यवाद के संबंध में बहुत पहले से मेरे पूर्वाग्रह है। मैं साम्यवाद तथा साम्यवादियों के विषय में बचपन से ही विपरीत धारणा रखता हूँ। करीब पचास वर्ष पूर्व मैंने एक नाटक लिखकर उसे लोगों में दिखाया। नाटक के अनुसार दो ग्रामीण कहीं जा रहे थे जिनमें से एक के पास छोटी सी गठरी थी और दूसरे के पास बहुत बड़ी। एक तीसरा व्यक्ति साथ चलने लगता है जिसके पास कुछ नहीं है। वह तीसरा व्यक्ति छोटी गठरी वाले को समझाता है कि गठरी में इतनी असमानता ठीक नहीं। मैं चाहता हूँ कि तुम लाग गठरी को इस तरह कर लो कि दोनों की गठरी समान रहे। तीसरे व्यक्ति के दबाव के कारण बड़ी गठरी वाला भी दब गया और दोनों ने अपनी अपनी गठरी तीसरे व्यक्ति को बराबर करने के लिये दे दी। तीसरा व्यक्ति पूरी गठरी लेकर बोला कि तुम दोनों की गठरी बराबर अर्थात शून्य हो गई और यह गठरी लेकर वह तीसरा व्यक्ति चला गया। यह तीसरा व्यक्ति साम्यवादी था जो सशस्त्र था। दोनों ग्रामीणों की गठरियों में अधिकार रखे थे जो असमान थे। ये मेरी बचपन से धारणा रही है जो अब तक कायम है।

भारत में श्रम और श्रमजीवियो के साथ हो रहे छल कपट का मैं प्रबल विरोधी हूँ। साम्यवाद ने श्रम के साथ छल किया और पूंजीवाद ने शोषण। मेरी यह धारणा है कि श्रम शोषण तथा बढ़ती आर्थिक विषमता का समाधान करने के लिये श्रम के साथ हो रहे साम्यवादी समाजवादी छल कपट का पर्दाफाश करना आवश्यक है।

इस्लाम के विषय में भी मेरी धारणा बन गई है कि इस्लाम का धार्मिक स्वरूप बहुत अच्छा है और संगठनात्मक अत्यन्त खतरनाक। मुसलमान व्यक्तिगत रूप से बहुत अच्छा और विश्वसनीय होता है किन्तु वह जब इस्लामिक संगठन का भाग बन जाता है तब पूरी तरह अविश्वसनीय तथा खतरनाक हो जाता है। इसी तरह मेरी धारणा यह है कि हिन्दुत्व भी एक आदर्श व्यवस्था है। धार्मिक इस्लाम से भी कई गुना ज्यादा वैज्ञानिक हिन्दुत्व के मूल स्वरूप पर मुझे बहुत गर्व होता है। किन्तु संघ परिवार अपने राजनैतिक उद्देश्यों के लिये हिन्दुत्व के मूल स्वरूप में जो विकृति पैदा कर रहा है वह हिन्दुत्व को बहुत नुकसान पहुँचा रही है। यही कारण है कि मैं साम्यवाद का विरोधी इस्लाम का आलोचक तथा संघ परिवार से दूरी बनाकर रखता हूँ।